International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 6; November 2016; Page No. 52-54

उदय प्रकाश की कविताओं में राजनीतिक विसंगतियाँ एवम् भ्रष्टाचार

रीना परवाल

शोधार्थी, हिंदी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

उदय प्रकाश के साहित्य को गहराई से पढ़ने के बाद यह बात साफ हो जाती है कि उनकी कविताएँ हो या कहानियाँ, राजनीतिक संदर्भो और विसंगितयों को उधेड़ कर रख देती हैं। ऐसे राजनेता जो छल–प्रपंच करते हैं, जनता का शोषण करते हैं उनका उदय प्रकाश व्यंग्य के तीखे बाणों से जीना दूभर कर देते हैं। उनकी कहानियाँ राजनीतिक प्रशासन के कुत्सित रूप और चारों तरफ फैले भ्रष्टाचार पर टिप्पणियां करती चलती हैं। इनकी कविताओं में राजनीति आतंक से पीड़ित मानवता के दुख और वेदना को व्यक्त किया गया है।

वर्तमान समय में मानव के भाग्य पर शासन करने वाली दो प्रमुख शक्तियाँ है– राजनीति और विज्ञान। जहाँ एक ओर धार्मिक आस्था के लोप होने के कारण आज का मनुष्य तर्कशील बन गया है वहाँ दूसरी ओर राजनीति उसके दिन–प्रतिदन के जीवन को नियमित और परिचालित करने वाली शक्ति के रूप में उभर कर सामने आई हैं। यही कारण है कि वर्तमान जीवन को रूपायित करने वाली आज की रचनाओं में राजनीति का स्पष्ट चित्रण मिलता है। "आजकल राजनीतिक समस्याएँ ही हमारी प्रमुख समस्याएं है और हमारे प्राणों की शक्ति सबसे पहले उन्हीं से टक्कर लेना चाहती है, तो यह हमारे स्वस्थ होने का लक्षण है. साहित्य और राजनीति का प्रभाव एक दूसरे पर होने से किसी तरह भी रोका नहीं जा सकता – चाहे राजनीति का युग हो चाहे साहित्य का।"[1] वर्तमान परिवेश में राजनीति ने हमारे पूरे समाज को व्यापक रूप को प्रभावित किया है। समाज की प्रत्येक घटना साहित्य में जगह पाती है अतः साहित्य और राजनीति का अटूट सम्बन्ध है। साहित्य और राजनीति की गति और विकास सामाजिक गति और विकास पर निर्भर करता है और इसी अनिवार्यता के चलते जैसे ही समाज वर्गों में बंट जाता है तो किसी न किसी रूप में साहित्य और राजनीतिक का चरित्र भी प्रभावित होता है। "जहाँ तक दोनों के अतः संबंधों की बात है, दोनों में अनिवार्य संबंध यह है कि वर्ग–विभक्त समाज में साहित्य क्योंकि वर्ग–संघर्ष से निरपेक्ष नहीं रह सकता, इसलिए उसमें व्यक्त विचार, भावनाएं, सौन्दर्याभिरूचियां आदि समाज में जारी वर्ग–संघर्ष के विशिष्ट रूप से प्रभावित होती है और उनसे युक्त साहित्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में कमोवेश वर्ग–संघर्ष के उस विशिष्ट रूप को प्रभावित भी करता है। अतः साहित्य और राजनीति के कार्यक्षेत्र यद्यपि भिन्न होते हैं फिर भी उनकी भिन्न भूमिकाएं एक समान लक्ष्य की दिशा में समाज को प्रेरित करने वाली होती हैं।"[2]

राजनीति समाज का एक महत्वपूर्ण अंग बन गई है। समाज के निर्माण तथा व्यक्ति के उत्थान–पतन में इसका विशेष योगदान रहता है। इसलिए राजनीतिक से जुड़ना साहित्य कर्म का एक महत्वपूर्ण अंग है। रचनाकार अपनी कृति में राजनीति का उपयोग किसी विशिष्ट भाव के प्रदर्शन के लिए करता है। यूँ तो एक राजनेता भी समाज में जागृति लाने का प्रयास करता है फिर भी साहित्यकार और राजनीतिज्ञ का अपना–अपना दायित्व होता है। राजनेता राजनैतिक कार्यक्रमों जैसे भाषण, सभाएँ आदि के द्वारा जनता को जागृत करने का प्रयास करता है। परन्तु साहित्यकार व्यक्ति के परिवेश में निहित राजनीतिक विसंगतियों को आत्मसात् कर साहित्य में अभिव्यक्त करते हुए जन मानस को सही दिशा दिखलाता हैं। "साहित्यकार परिवेश की असंगतियों में निहित राजनीतिक उत्पीड़न के सूक्ष्म अप्रत्यक्ष तन्तुओं का अनावृत करते हुए जनमानस की मानसिकता को सही दिशा की ओर प्रेरित करता है।"[3] साहित्यकार अपनी रचना रूपी तीखे बाणों से व्यक्ति को समाज के प्रति सचेत करता है। साहित्य राजनीति को एक दिशा प्रदान करता है ताकि वह सही मार्ग पर अग्रसित होती रहे। वह राजनीति को भ्रमित होने से बचाता है। साहित्यकार राजनीति के आगे चलने वाली मशाल के समान है।

सातवें तथा आठवें दशक के रचनाकारों की राजनैतिक चेतना का विकास अनेक रूपों में हुआ है। इसे राजनीतिक मोह भंग तथा नयी राजनीतिक समझ के रूप में लिया जा सकता है। यह राजनीतिक चेतना साहित्य में मानवीय संबंधो के साथ जुड़कर ओर अधिक गहराई से संवेदित हुई है। सिर्फ राजनीतिक शब्दों के प्रयोग तक ही रचनाकार नहीं ठहर गया है बल्कि बिना किसी राजनीतिक शब्द के प्रयोग किये भी मानवीय स्थिति की विडम्बनाओं, वेदनाओं को गहन अभिव्यक्ति मिली है। वर्तमान में जो मानव की स्थिति है वह राजनीतिक सत्ता की ही देन है। इसलिए रचना धार्मिता के लिए राजनीतिक समझ को अनिवार्य माना गया है। इसके बिना रचनाकार विरोध की राजनीति में ईमानदार नहीं रह सकता। आजादी के बाद भारतीय जनता जिन मधुर सपनों में खोई हुई थी, उनसे मोह भंग होने लगा। भारतीय लोकतंत्र में जनता की आकांक्षाओं को पूरा करने का सामर्थ्य नही रहा। एक सजग व ईमानदार बुद्धिजीवी रचनाकार परिवेश की वास्तविकता से मुँह नही मोड़ सका। उसके सामने राजनीति से जुड़े अनेक प्रश्न आये, जिनके समाधान करने को वह तत्पर है। वह व्यवस्था की स्वार्थ प्रेरित नीतियों, भ्रष्टाचार, अवसरवादिता, अन्याय और अत्याचारपूर्ण गतिविधियों पर चिन्ता प्रकट करता है। उसका विरोध मूलभूत व्यवस्था से न होकर बल्कि व्यवस्था की अमानवीय नीतियों से है। वह प्रजातन्त्र को सही रूप में समाजवादी जनवादी रूप देना चाहता है। वह अपने साहित्य के माध्यम से राजनीतिक अन्तर्विरोधों और विसंगतियों का पर्दाफाश करता है। यह सब तभी सम्भव है जब उसका राजनीति के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण हो। यह सिद्धान्त बहुत आकर्षक लगता है कि प्रजातंत्र में शासन सम्बन्धी निर्णय बहुमत के आधार पर लिए जायेंगे। इसमें भी यह मानकर चला जाता है कि बहुमत अन्ततः अपने विवेक से वही निर्णय लेंगे जिनसे अधिकांश जनता का हित सम्पादित होता है। दुर्भाग्य से व्यवहार में ऐसा नहीं होता। सत्ता कुछेक हाथों में ही सीमित हो जाती है। लोकहित के नाम पर केवल नारेबाजी रह जाती है। जब तक किसी के हाथ में सत्ता है, वह अपने हित में उसका पूर्ण उपयोग कर लेना चाहता है। आज पापों को आदर्श माना जा रहा है। चारो तरफ नृशंस हत्याएँ हो रही हैं। देश का नागरिक स्वयं को सुरक्षित महसूस नही करता। वह खुली आंखों से अन्याय को देखता है। लोकतन्त्र की परिभाषा मज़ाक बनकर रह गई है। साहित्यकार देश की संसद तथा लोकतंत्र पर व्यंग्य करते है, साथ ही जनता में भी

राजनीतिक चेतना लाना चाहते हैं। चारो तरफ भ्रष्टाचार का बोलबाला लोकतन्त्र के लिए खतरा साबित हो रहा है। एक सजग व जागरुक रचनाकार इस खतरे से परिचय कराते हुए खतरे को एक चुनौती के समान सामने लाता है और यह उसका दायित्व भी है।

आज के राजनीति परिदृश्य की सबसे बड़ी विसंगति राजनैतिक व्यवस्था का भ्रष्ट होना है। संसद से सड़क तक प्रत्येक स्तर पर भ्रष्ट व्यवस्था है। इस भ्रष्ट राजनीतिक व्यवस्था के विविध रूपों का उदय प्रकाश की कविताओं में स्थान दिया गया है। भारतीय लोकतंत्र एवं राजनीतिक व्यवस्था के नग्न रूप का चित्रण 'राज्यसत्ता' कविता में हुआ है।

प्रजातंत्र, लोकतंत्र कुछ भी नाम दिया जाए है तो प्रजा द्वारा प्रजा के लिए बनाया गया तंत्र है। राज्यसत्ता का निर्माण इसीलिए किया जाता है कि जनता सुख–शांति से जीवनयापन कर सके परन्तु जिस राज्यसत्ता का मतलब ही अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता है वह ही कुछ न बोलने का कानून जनता पर थोपती है–

राज्य सत्ता
अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का
कानून है
और जो इस कानून की ज़द में है
उसे बोलने नहीं देती राज्यसत्ता।[4]

राज्यसत्ता आम आदमी के लिए अनेक कानून बनाती है। वह एक जागरूक रचनाकार को भी नहीं छोड़ती। वह चेतावनी देती है कि कविताएँ प्रशासन, पर लोकतंत्र पर नहीं होनी चाहिए। कविता को केवल रस देने वाली होना चाहिए। तंत्र के बारे में लिखी गई कविता दरअसल राज्यसत्ता के लिए कविता ही नहीं है–

राज्यसत्ता कहती है–
कविता को नहीं होना चाहिए
राज्यसत्ता के बारे में
कानून के बारे में नहीं होनी चाहिए
कोई कविता
तन्त्र के बारे में
कविता को नहीं होना चाहिए
कविता को होना चाहिए
सिर्फ चाहिए जैसी कविता के बारे में।[5]

कवि राज्यसत्ता पर व्यंग्य करते हुए राज्यसत्ता की परिभाषा बताना चाहता है कि राज्यसत्ता केवल पाँच प्रतिशत लोगों के हाथ में मनमाना राज है। जो लोग सत्तासीन हैं वहीं इस राज्यसत्ता का मज़ा ले सकते हैं। बाकी की जनता के लिए राज्यसत्ता केवल बारूद की सत्ता है–

राज्य सत्ता
अस्सी प्रतिशत लोगों की आँख में
बूट और बारुद की सत्ता है,
पाँच प्रतिशत लोगों के हाथ में
मनमाना राज्य
और बाकी हम जैसो के दिमाग में
राज्यसत्ता।[6]

उदय प्रकाश इस व्यवस्था को देखकर चिंतित है कि इस भ्रष्ट व्यवस्था में साधारण मानव के लिए कहीं भी राहत की सांस नहीं है। इसमें मानवीय संवेदना की गुंजाइश ही नहीं है। राजनैतिक पार्टियाँ अपना हित साधने के लिए विचारधाराओं को भुनाने में संलग्न रहकर निरन्तर व्यक्ति की अस्मिता पर आघात करती रहती हैं। उदय प्रकाश 'व्यवस्था' कविता के माध्यम से वर्तमान समय की आश्चर्यचकित करने वाली व्यवस्था पर कटाक्ष करते हुए लिखते हैं

सब कुछ शांत है
सब कहीं
व्यवस्था है
सब ठीक हैं।"[7]

इस व्यवस्था पर यह कविता तीखा व्यंग्य है। चारो तरफ हिंसा, लूटपाट, खून–हत्या जैसी वारदातें हो रही है। फिर कैसे सब कुछ शांत और ठीक हो सकता है। कविता की अंतिम पंक्ति व्यवस्था पर सार्थक सिद्ध होती है।

सरकार की जो परम्परागत परिभाषा रही, उसे बदलने के लिए साधारण जन तत्पर है। अपने को सरकार मानने वालों के दिन लद गये है।

"सुना उन्होंने सुना
अपने अन्तिम समय उन्होंने साफ–साफ सुना
चबुतरे के चारों तरफ शोर उठ रहा था–
"हम सरकार हैं।"[8]

भारतीय लोकतन्त्र में कानून के समक्ष समानता के नियम को अपनाया गया है। यानि कि कानून की नजर में सभी समान होते है। अपराधी अमीर हो या गरीब इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। कानूनों का उल्लंघन करने पर सजा सबको बराबर मिलती है। कानूनों का यदि कोई उल्लंघन करता है तो उसके लिए न्यायपालिका का निर्माण किया गया है। व्यक्ति न्यायालय में न्याय की गुहार लगा सकता है। न्यायालय की जिम्मेदारी होती है कि निर्दोष को सजा न मिले और अपराधी किसी भी हालत में सजा पाये। परन्तु वर्तमान में वास्तविक स्थिति ऐसी नहीं है। आज पूंजीपति पूंजी का रौब दिखाकर, सत्ता की ताकत के बल पर झूठे गवाह तैयार करता है, झूठे सबूत तैयार करता है और अधिकांश बार बाइज्जत बरी हो जाता है। कई बार न्यायधीशों की व्यस्तता या काम के भार के चलते न्यायप्रक्रिया, लंबा समय ले लेती है इतना कि न्याय पाने वाला मर जाता है और उसका फैसला उसकी मौत के बाद आता है। उदाहरण के लिए भोपाल में 1984 में एक जहरीली गैस के रिसाव से एक घटना घटी थी जिसमें हजारों लोग मारे गये, विकलांग हो गये, उसके अभियुक्त को पिछले कुछ सालों तक भी सजा नहीं हो पायी थी। ऐसे अनगिनत केस हैं जिनका निर्णय होना बाकी है और अभियुक्त एशोआराम की जिन्दगी जी रहे है। ये हमारी न्याय प्रक्रिया के ढीलेपन का परिचय है।

'चंकी पाडेय मुकर गया' कविता में गवाहों के मुकर जाने पर अदालत भी अपराध के पक्ष में फैसला सुनाती है सबूत अपराध को बयान कर रहे है परन्तु गवाह सच जानते हुए भी झूठ का साथ दे रहे है। इसके पीछे या तो उनका डर हो सकता है या लालच। अदालत ऐसी स्थिति में लाचार हो जाती है, दोषी के पक्ष में फैसला सुनाती है।

एक बड़ी सी वीडियो रिकॉर्डिग थी दुबई की
जिसमें अबू सलेम की पार्टी में शामिल थे
बड़े–बड़े आला कलाकार और साख–रसूख वाली हस्तियाँ
इसी टेप से सुराग़ मिलता था गुलशन कुमार की हत्या का
लेकिन अदालत में चंकी पांडे ने कहा कि वह तो अबू सलेम को पहचानता ही नहीं और टेप में तो वह यों ही उसके गले से लिपटा हुआ दिखाई देता है
ऐसा ही बाकी हस्तियों ने कहा
हिन्दुस्तान की अदालत ने भी माना कि दरअसल उस टेप मे दिख रहा कोई भी आला हाकिम–हुक्काम, अभिनेत्रियाँ या अभिनेता अबू सलेम को नहीं पहचानता और जो वह एक्ट्रेस उसकी गोद में बैठी चूमा–चाटी कर रही थी

उसका ब्यान भी अदालत ने माना कि कोई जरूरी नहीं कि और औरत अगर किसी को चूमे तो वह उसे पहचानती भी हो
तो लुब्बे–लुआब यह कि अबू सलेम को पहचानने के मामले में सारे गवाह मुकर गए
उसी तरह जैसे बी0 एम0 डब्ल्यू0 कांड में कार में कुचले गए पाँच लोगों के चश्मदीद गवाह संजीव नंदा और उसकी हत्यारी कार को पहचानने से मुकर गए जैसे जेसिका लाल हत्याकांड से सारे प्रत्यक्षदर्शी मनु शर्मा को पहचानने से मुकर गए।"[9]

यह बात उन ताकतवर अपराधियों की है, जो पूँजी और सत्ता का भरपूर फ़ायदा उठाते है। प्रत्यक्षदर्शियों को तो चुटकियों में अपनी तरफ खड़ा कर लेते है। शक्ति का दुरुपयोग कर अपराध को बढ़ावा देते है। परन्तु कुछ ऐसे लोग भी है जो मुजरिम नहीं होते पर उन्हें सजा मिलती है। उदय अतीत के पात्रों को चित्रित करके ये बताना चाहते है कि बुरे दिनों का न्याय कैसा होता है –

कटघरे में चीखता है बंदी
'योर ऑनर,
मुझे नहीं मैकाले को भेजना चाहिए
कालापानी
'योर ऑनर
इतिहास में और भविष्य में फांसी का हुक्म
जनरल डायर के लिए हो
'मुज़रिम मैं नहीं
हिज हाईनेस
मुज़रिम नाथूराम हैं
नेपथ्य में से निकलते हैं कर्मचारी
सिर पर डालकर काला कनटोप
उसे ले जाते हैं नेपथ्य की ओर
न्यायधीश तोड़ता है कलम
न्यायविद् लेते हैं जुमहाइयां
दुर्दिनों में ऐसी ही हुआ करता है न्याय।"[10]

इस कविता के माध्यम से कवि उदय प्रकाश न्यायतंत्र की न्याय–प्रियता को उद्घाटित करता है।
अतः स्पष्ट होता है कि उदय प्रकाश की कविताएँ राजनीतिक परिवेश को उसके सही रूप में प्रस्तुत करती हैं। इन कविताओं के माध्यम से कवि साधारण जन को समाज में राजनीति के कुत्सित रूप को पहचानने में मदद मिली है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अज्ञेय : झगड़े का हल : विशाल भारत, अक्तूबर, 1937, पृ0 475–76।
2. ओम प्रकाश ग्रेंवाल – साहित्य और विचारधारा, आधार प्रकाशन, पंचकुला, 1994, पृ0 26।
3. डॉ0 गुणमाला नवलखा, स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी–कविता में राजनीतिक चेतना, 1992, पृ0 33।
4. उदय प्रकाश – अबूतर–कबूतर, स्वर्ण जयंती प्रकाशन, दिल्ली 2005, पृ0 71।
5. वही, पृ0 72।
6. वही, पृ0 95।
7. उदय प्रकाश, सुनो कारीगर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृ0 41।
8. उदय प्रकाश – एक भाषा हुआ करती है, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2011, पृ0 21।
9. उदय प्रकाश – रात में हारमोनियम, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1999 पृ0, 112–113।